जैविक शौचालय

रमा मेहता

दक्षिण अफ्रीका में 1990 के एक विश्व सम्मेलन में यह वादा किया गया था कि सन् 2000 तक सभी को आधुनिक शौचालय मुहैया करा दिया जायेगा। अब सन् 2000 में वादा किया गया है कि 2015 तक विश्व के आधे लोगों को आधुनिक शौचालय मुहैया करा दिये जायेंगे। भारत समेत दुनिया के तमाम देशों ने इस वचनपत्र पर हस्ताक्षर किये हैं और इस दिशा में काम भी कर रहे हैं। भारत के आंकड़ों को देखें तो ग्रामीण इलाकों में सिर्फ 3% लोगों के पास फ्लश टायलेट हैं शहरों में भी यह आंकड़ा 22.5% को पार नहीं करता।

पर्यावरण के अनुकूल हैं जैविक-शौचालय

जैविक-शौचालयः

गंदे और बदबूदार सार्वजनिक शौचालयों से निजात दिलाने के लिए जापान की एक गैर-सरकारी संस्था ने 'जैविक-शौचालय' विकसित करने में सफलता हासिल की है। ये खास किस्म के शौचालय गंध-रहित तो हैं ही, साथ ही पर्यावरण के लिए भी सुरक्षित हैं। समाचार एजेंसी 'डीपीए' के अनुसार संस्था द्वारा विकसित किए गए जैविक-शौचालय ऐसे सूक्ष्म कीटाणुओं को सक्रिय करते हैं जो मल इत्यादि को सड़ने में मदद करते हैं।

इस प्रक्रिया के तहत मल सड़ने के बाद केवल नाइट्रोजन गैस और पानी ही शेष बचते हैं, जिसके बाद पानी को पुनःचक्रित (री-साइकिल) कर शौचालयों में इस्तेमाल किया जा सकता है। संस्था ने जापान की सबसे ऊंची पर्वत चोटी 'मांउट फुजी' पर इन शैचालयों को स्थापित किया है। गौरतलब है गर्मियों में यहां आने वाले पर्वतारोहियों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले सार्वजनिक शौचालयों के चलते पर्वत पर मानव मल इकट्ठा होने से पर्यावरण दूषित हो रहा है।

इस प्रयास के बाद 'मांउट फुजी' पर मौजूद सभी 42 शौचालयों को जैविक-शौचालयों में बदल दिया गया है। इसके अलावा सार्वजनिक इस्तेमाल के लिए पर्यावरण के लिए सुरक्षित आराम-गृह भी बनाए गए हैं।

कम्पोस्ट टॉयलेट (शौचालय खादः

इकोजैनमल एक ऐसी वस्तु है जो हमारे पेट में तो पैदा होती है पर जैसे ही वह हमारे शरीर से अलग होती है हम उस तरफ देखना या उसके बारे में सोचना भी पसंद नहीं करते। पर आंकड़े बताते हैं कि फ्लश लैट्रिन के आविष्कार के 100 साल बाद भी आज दुनिया में सिर्फ 15% लोगों के पास ही आधुनिक विकास का यह प्रतीक पहुंच पाया है और फ्लश लैट्रिन होने के बावजूद भी इस मल का 95% से अधिक आज भी बगैर किसी ट्रीटमेंट के नदियों के माध्यम से समुद्र में पहुंचता है।

दुनिया के लगभग आधे लोगों के पास पिट लैट्रिन है जहां मल नीचे गड्ढे में इकट्ठा होता है और आंकडों के अनुसार इनमें से अधिकतर से मल रिस-रिस कर ज़मीन के पानी को दूषित कर रहे हैं। छत्तीसगढ में बिलासपुर जैसे शहर इसके उदाहरण हैं।

इस दुनिया ने बहुत तरक्की कर ली है आदमी चांद और न जाने कहां-कहां पहुंच गया है पर हमें यह नहीं पता कि हम अपने मल के साथ क्या करें। क्या किसी ने कोई गणित लगाया है कि यदि सारी दुनिया में फ्लश

टॉयलेट लाना है और उस मल का ट्रीटमेंट करना है तो विकास की इस दौड़ में कितना खर्च आयेगा?

दक्षिण अफ्रीका में 1990 के एक विश्व सम्मेलन में यह वादा किया गया था कि सन् 2000 तक सभी को आधुनिक शौचालय मुहैया करा दिया जायेगा। अब सन् 2000 में वादा किया गया है कि 2015 तक विश्व के आधे लोगों को आधुनिक शौचालय मुहैया करा दिये जायेंगे। भारत समेत दुनिया के तमाम देशों ने इस वचनपत्र पर हस्ताक्षर किये हैं और इस दिशा में काम भी कर रहे हैं। भारत के आंकड़ों को देखें तो ग्रामीण इलाकों में सिर्फ 3% लोगों के पास फ्लश टायलेट हैं शहरों में भी यह आंकड़ा 22.5% को पार नहीं करता।

स्टाकहोम एनवायरनमेंट इंस्टीट्यूट दुनिया की प्रमुखतम पर्यावरण शोध संस्थाओं में से एक है। इस संस्था के उप प्रमुख योरान एक्सबर्ग कहते हैं फ्लश टायलेट की सोच गलत थी, उसने पर्यावरण का बहुत नुकसान किया है और अब हमें अपने आप को और अधिक बेवकूफ बनाने की बजाय विकेन्द्रित समाधान की ओर लौटना होगा। सीधा सा गणित है कि एक बार फ्लश करने में 10 से 20 लीटर पानी की आवश्यकता होती है यदि दुनिया के 6 अरब लोग फ्लश लैट्रिन का उपयोग करने लगे तो इतना पानी आप लायेंगे कहां से और इतने मल का ट्रीटमेंट करने के लिये प्लांट कहां लगायेंगे?

हमारे मल में पैथोजेन होते हैं जो सम्पर्क में आने पर हमारा नुकसान करते हैं। इसलिये मल से दूर रहने की सलाह दी जाती है। पर आधुनिक विज्ञान कहता है यदि पैथोजेन को उपयुक्त माहौल न मिले तो वह थोड़े दिन में नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य का मल उसके बाद बहुत अच्छे खाद में परिवर्तित हो जाता है जिसे कम्पोस्ट कहते हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार एक मनुष्य प्रतिवर्ष औसतन जितने मल-मूत्र का त्याग करता है उससे बने खाद से लगभग उतने ही भोजन का निर्माण होता है जितना उसे सालभर ज़िन्दा रहने के लिये ज़रूरी होता है। यह जीवन का चक्र है। रासायनिक खाद में भी हम नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम का उपयोग करते हैं। मनुष्य के मल एवं मूत्र उसके बहुत अच्छे स्रोत हैं। विकास की असंतुलित अवधारणा ने हमें हमारे मल को दूर फेंकने के लिये प्रोत्साहित किया है, फ्लश कर दो उसके बाद भूल जाओ। रासायनिक खाद पर आधारित कृषि हमें अधिक दूर ले जाती दिखती नहीं है। हम एक ही विश्व में रहते हैं और गंदगी को हम जितनी भी दूर फेंक दें वह हम तक लौट कर आती है।

गांधी जी अपने आश्रम में कहा करते थे गड्ढा खोदो और अपने मल को मिट्टी से ढक दो। आज विश्व के तमाम वैज्ञानिक उसी राह पर वापस आ रहे हैं। वे कह रहे हैं कि मल में पानी मिलाने से उसके पैथोजेन को जीवन मिलता है वह मरता नहीं। मल को मिट्टी या राख से ढक दीजिये वह खाद बन जायेगी। इसके बेहतर प्रबंधन की ज़रूरत है दूर फेंके जाने की नहीं। हमें अपनी सोच में यह बदलाव लाने की ज़रूरत है कि मल और मूत्र खजाने हैं बोझ नहीं। यूरोप और अमेरिका में ऐसे अनेक राज्य हैं जो अब लोगों को सूखे टॉयलेट की ओर प्रोत्साहित कर रहे हैं। चीन में ऐसे कई नए शहर बन रहे हैं जहां सारे के सारे आधुनिक बहुमंजिली भवनों में कम्पोस्ट टॉयलेट ही होंगे। भारत में भी इस दिशा में काफी लोग काम कर रहे हैं। केरल की संस्था www.eco-solutions.org ने इस दिशा में कमाल का काम किया है। मध्य प्रदेश के वरिष्ठ अधिकारियों ने केरल में उनके कम्पोस्ट टॉयलेट का दौरा किया है।

विज्ञान की मदद से आज हमें किसी मेहतरानी की ज़रूरत नहीं है जो हमारा मैला इकट्ठा करे। कम्पोस्ट टॉयलेट द्वारा मल-मूत्र का वैज्ञानिक प्रबंधन बहुत सरलता से सीखा जा सकता है। गांवों में यह सैकड़ों नौकरियां पैदा करेगा, कम्पोस्ट फसल की पैदावार बढ़ाएगा और मल के सम्पर्क में आने से होने वाली बीमारियों से बचायेगा। मल को नदी में बहा देने से वह किसी न किसी रूप में हमारे पास फिर वापस आता है। यह शतुरमुर्गी चाल हमें छोड़नी होगी वर्ना हमारी बरबादी का ज़िम्मेदार कोई और नहीं होगा।

सच्ची कहानी - महिलाओं ने आख़िर हासिल कर लिया शौचालय

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से 45 किलोमीटर दूर अहमदपुर गांव की महिलाओं में 25 जनवरी से आत्म-सम्मान की एक नई लहर दौड़ रही है। इन महिलाओं ने लड़-झगड़कर गांव में एक जैविक-शौचालय का निर्माण करवा लिया है। और अब उन्हें रात-बिरात, मौसम-बेमौसम खुले में शौच नहीं जाना पड़ेगा।

अहमदपुर, माल ब्लॉक और मलिहाबाद तहसील का हिस्सा है यहां से तहसील मुख्यालय 21 किलोमीटर दूर है। 825 की जनसंख्या वाले अहमदपुर में सरकारी शौचालय काफी जर्जर हालत में है।

यहां के 125 घरों में से केवल आठ ही ऐसे हैं जिनमें शौचालय की व्यवस्था है। लेकिन सर्दी, गर्मी और बरसात में गांव के बाक़ी मर्दों, औरतों और बच्चों को शौच के लिए खेतों और आम के बागों में ही जाना पड़ता था।

गर्मी में इनको विशेष दिक़्क़त होती थी क्योंकि गांव में आम के बाग़ अधिक हैं और फसल के समय इनको ठेके पर बेच दिया जाता है। जिससे आम की फसल की निगरानी करने वाले फलों की चोरी के डर से लोगों को बाग़ में घुसने नहीं देते हैं।

नहीं मिली सरकारी मदद्

इन तमाम मुश्किलों के बाद भी जब गांव के तीन महिला स्वयं सहायता समूहों की 36 सदस्यों ने एक शौचालय बनवाने का फ़ैसला लिया तो गांव में कोई उन्हें ज़मीन देने को भी तैयार

नहीं हुआ। आखिर में श्रीमती सुशीला के पति श्री रामकुमार ने जमीन दी, तब जाकर शौचालय बना।

जैविक-शौचालय की संरक्षक

50 वर्षीय श्रीमती सुशीला को सर्वसम्मति से जैविक-शौचालय प्रबंध समिति का संरक्षक चुना गया। वह बताती हैं कि उन्हें कितनी मुश्किलों का सामना करना पड़ा।

लेकिन इन महिलाओं ने हिम्मत नहीं हारी। उन्होंने मिलकर गांव के आंतरिक प्रतिरोध से लड़कर शौचालय बनवा कर ही दम लिया। उनके इस प्रयास में गैर-सरकारी संस्था 'वात्सल्य' ने आरम्भ से अंत तक अहम भूमिका निभाई।

इस पूरे संघर्ष में तीन महीने लगे। सुशीला बताती हैं कि इस नए, पक्के, शौचालय का इस्तेमाल 18 परिवार ही कर रहे हैं। किसी परिवार में नौ सदस्य हैं तो किसी में सात।

सुशीला के अलावा नन्ही शौचालय के प्रबंध समिति सचिव का काम देखती हैं जबकि श्री सियाराम कोषाध्यक्ष हैं। नन्हीं के मुताबिक तीन और परिवार इसका इस्तेमाल करना चाहते हैं।

15 रुपये प्रति महीना

इसमें चार शौचालय हैं और एक स्नानघर इसके बगल में ही मर्दों के लिए इसी तरह की व्यवस्था है।

प्रत्येक परिवार, जो इस शौचालय का इस्तेमाल कर रहा है, उसे इसके रख-रखाव के लिए 15 रुपये प्रति माह देना होगा। इस राशि में से ही बिजली का बिल भी अदा किया जाएगा।

इसकी सफ़ाई की ज़िम्मेदारी प्रबंध समिति की महिलाओं ने अपने ऊपर ले ली है।

वात्सल्य के अंजनी कुमार सिंह बताते हैं कि इस जैविक-शौचालय की विशेषता देश के रक्षा अनुसंधान संगठन (डीआरडीओ) द्वारा तैयार की गई इसकी आधुनिक तकनीक है, जिसे बायो-डीजेस्टर कहते हैं।

45 फुट लम्बे और 18 फुट चौड़े इस शौचालय का मल-मूत्र जीवाणुओं द्वारा साफ़ पानी में बदल दिया जाता है जिसे क्यारियों की सिंचाई के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

गांव की महिलाएं अभी इस पानी के इस्तेमाल के लिए पूरी तरह सहमत नहीं हैं।

बायो-डीजेस्टर टैंक के निर्माण में 1.80 लाख रुपए खर्च हुए जबकि इसकी कुल लागत 6.25 लाख रुपए आई। यह सारा खर्च ग़ैर-सरकारी संस्था 'प्लान इंडिया' ने वहन किया।

संपर्क करें:
डॉ. रमा मेहता
राजसं, रुड़की

बरसात

गरम हुए सूरज दादा तो
बढ़ने लगा धरा का ताप,
सागर का पानी भी उबला
उड़ा गगन में बनकर भाप।

भाप कणों ने मिल आपस में
बना लिया बादल का रूप,
उड़ता रहता यहाँ वहाँ वह
रंग बदलते सहते धूप।

हवा उड़ा फिर इक दिन उसको
ऊँचे नभ के पहुँची पास,
ठण्ड बहुत थी अरे वहाँ तो
काँप गई बादल की साँस।

बादल के अन्दर से फिर तो
बरसी बूँदें कई हजार,
धरती पर फैली हरियाली
वर्षा जीवन का आधार।

नदी

नदियाँ कल-कल बहती जाती
धरती का आँचल हरियाती,
आता जो भी प्यासा तट पर
उन सब की ये प्यास बुझाती।

कितना निर्मल इनका पानी
इन पर बहती हवा सुहानी,
बगुले पाँत बनाकर बैठे
तैर रही है मछली रानी।

लोग नहाते कपड़े धोते
भर-भर घर ले जाते मटकी,
नदियों से यदि मिले न जल तो
समझो जग की साँसें अटकी।

नदियों से जीवों का जीवन
इनसे ही हैं जंगल उपवन,
नदियों को हम करें न दूषित
रखें बनाए इनको पावन।

बरसा पानी

बरसा पानी भरी तलाई
धरती पर हरियाली छाई,
सौंधी-सौंधी गंध उठी है
गर्मी की हो गई विदाई,

दौड़-दौड़ बच्चे आए
देख-देख पानी हर्षाए
कूद पड़े हैं कुछ तो इसमें
खड़े किनारे कुछ मुस्काए,

कोई फेंक रहा है कंकर,
नाचे कोई किलकारी भर
खोद-खोद कर गीली मिट्टी
बना रहा है कोई तो घर,

हवा चल रही कितनी बढ़िया
फुदक रही पेड़ों पर चिड़िया,
पानी को छूने की जिद कर
मचल रही गोदी में गुड़िया,

वर्षा है ऋतुओं की रानी
सारे जग को देती पानी,
आगे बढ़ती है इससे ही
सब जीवों की राम कहानी।

संपर्क करें:
सुरेश चन्द्र 'सर्वहारा'
3-फ-22, विज्ञान नगर, कोटा - 324005 (राज.)
मो.न. - 09928539446